एम-16, साकेत, नई-दिल्ली 110017 : 2.12.2011

प्रिय सविता जी,

स्नेह!

उस दिन फोन पर बात हुई थी अच्छा लगा। व्यस्तता के चलते आपको अपने प्रकाशनों की सूचना भेजने में विलम्ब हुआ। अब भेज रही हूं। देख लेंगी। अन्य कुछ चाहिए होगा तो लिखेंगी।

कृपया, पत्र की पहुंच भेज दीजिएगा। आज कल डाक का जो हिसाब है, उससे चिन्ता बनी रहती है।

आपको और डा० जगदीश चन्द्र जी को मेरी अनन्त शुभकामनाएं।

सस्नेह —

राजी सेठ.

राजी सेठ

29562232, 29563256
☎ ~~6967232, 6964256~~
एम – 16, साकेत,
नई दिल्ली – 110017

23.7.2012

प्रिय कविता,

आशा है तुम्हारे काम में प्रगति हो रही होगी। प्रश्न जो तुम मुझे ~~भेजती~~ भेजती रही हो, उनके समुचित उत्तर मैंने तुम्हें भेज दिए थे, आशा है उनका यथोचित इस्तेमाल हो सका होगा। मेरे रचनाकर्म के बारे में तुम्हारा क्या अभिमत बना, इसे तो मैं शायद कभी जान पाऊँ पर किसी अध्येता के लिए चीज़ों के बारे में लेखक के रुख को जानना भी परिप्रेक्ष्य बनाने में सहायक होता है। इस दृष्टि से यह प्रश्नावली तुम्हारे लिए सहायक रही होगी। यों तो तुम एक योग्य निर्देशक के नीचे काम कर रही हो कठिनाई पेश नहीं आएगी। तुमने ध्यान से रचनाओं का अध्ययन भी किया है, फिर भी कोई बात ~~प्रच्छन्न~~ रह गई हो, तो निस्संकोच पूछ सकती हो। अगली पीढ़ी के पनपते देखना मेरे लिए सुखद है। तुम्हारी सफलता के लिए मेरी शुभकामनाएँ।

शुभाकांक्षी
राजी सेठ

संलग्न – 2 फ़ोटो

पत्र व्यवहार

राजी सेठ के कथा-साहित्य में कथ्य और शिल्प के अन्तर्गत मन में कुछ जिज्ञासापूर्ण प्रश्नों के समाधान हेतु पत्र-व्यवहार के रूप में निम्नलिखित जानकारी उपलब्ध हुई।

प्र0 1 चौथे दशक तक पहुँचने तक आपकी लेखकीय यात्रा प्रारम्भ हुई क्या जीवन के 39 बसंत बीत जाने के अंतराल में आप साहित्य सृजन की ओर क्यों उन्मुख नहीं हुई?

अ0 - मेरा लेखन अनायास ही शुरू हुआ हो सकता है भीतर की घुटन रास्ता पाने के लिए व्यग्र और तैयार बैठी हो। एक कहानी की स्वीकृति दूसरी कहानी के लिए उत्साह बनती गई। . . यह बात तब अच्छी तरह समझ में आई, क्योंकि वहाँ अपना जीवन-विवेक, अपना जीवन-दर्शन भी गुंथकर शामिल होने की जमीन पा लेता है। मेरे लिए वही सबसे स्वस्तिकर उपलब्धि थी।

प्र0 2 कथा के साहित्य जगत में अपनी पहली रचना के प्रकाशन को देखकर आपके मानस पटल पर किस प्रकार की प्रतिक्रियाएं प्रस्फुटित हुई?

अ0 - विधिवत रूप से पहली कहानी अगस्त 1974 में 'नया प्रतीक' में छपी थी। नाम था - 'समान्तर चलते हुए'। यह कहानी बाद में कभी शैलेश मटियानी की पत्रिका 'विकल्प' में भी पहली रचना की तरह छपी . . . प्रथम कहानी के छपने के अवसर ने मुझे बहुत विचलित किया - रो देने की हद तक। विश्वास ही नहीं हुआ। वह मनोभाव तो मुझे अभी भी घेर लेता है। . . . मैं मानती हूँ कि हर अच्छे पाठक के भीतर एक लेखक, एक आलोचक छिपा होता है जो रच लेने के बाद इतनी तटस्थता पर लेता है कि अपने को भी मीमांसक दृष्टि से देख सके।

प्र0 3 आपके कथा साहित्य के मंथन से उसे लगता है कि आप के पत्र भारत-पाक विभाजन की प्रतिछाया से प्रभावित हुये हैं। यह मेरा मानना कहाँ तक उचित है। अधिकांश पात्रों में पंजाबीपन अधिक झलकता हुआ दिखाई देता है जैसे सुरजीत, वीराँ, कप्पी, तिन्नी, चन्नी, आदि?

उ0 - नामों में क्या है। वे तो परिवेश की औलाद हैं, इसलिए संस्कृति विशेष को इंगित भी कर सकते हैं, पर हमेशा ऐसा नहीं होता। लिखते समय के दबाव में जो नाम ध्यान में आया वह कथा के पूरा होने तक वहीं स्थित हो जाता है। . . . विभाजन का क्षोभ या पंजाबी आत्मीयता मेरे लेखन में हस्तक्षेप करने का कोई डर पैदा नहीं करती। मैं जो लिख रही होती हूँ, पूरी तरह उसी की होकर रहती हूँ। यह बात अलग है कि उपयुक्तता के हक में मैं उन भाषाओं के शब्दों का खुलकर इस्तेमाल करती हूँ जो भाषाएँ मैं जानती हूँ।

प्र0 4 आपके समग्र साहिम्य के मंथन से जहाँ तक मैं समझती हूँ आपका अधिकांश साहित्य 'स्वांत: सुखाय' की प्रवृति को लेकर उद्घाटित हुआ है? मेरी यह सोच कहाँ तक सत्य है?

उ0 स्वांत: सुखाय किन्हीं ज्ञात कारणों से साहित्यिक समाज में एक परहेज़ी शब्द बन गया है नहीं तो कौन सी रचना ऐसी है जिसे हम स्वयं नहीं लिखते या उस बन रहे संसार, या बाहरी संसार का संपर्क-बिन्दु हम स्वयं नहीं होते। लिखने का अर्थ ही है स्वयं के द्वारा, अपने आवेग-आवेश की गत्यात्मकता द्वारा, अपने 'देखने' को व्यक्त करना। पर अंतत: देखना (परसेप्शन) तो संसार-समाज को ही है। आखिर लेखक की क्रियाएं-प्रतिक्रियाएं किसी अंधेरे कोने में बैठकर तो नहीं बनती।

प्र0 5 कालजयी रचनाओं का यदि आप ने मूल्यांकन करना हो तो उसके लिये आप क्या मानदंड अपनायेगी?

उ0 - यों तो सभी अव्यवों के सुगठित रूप से रचना में चिर प्रभाव की सिद्धि होती है पर मेरे विचार में कृति को कालजयिता बृहद मानवता के प्रोजेक्शन से मिलती है। मनुष्यता में प्रसुप्त पड़े मूल्य चिंतन के बीजों को पल्लवित करके, अर्थत्व के घेरों का विस्तार करके। यह भावी को हर पीढ़ी द्वारा दिया जाता वरदान-रूप माना जा सकता है।

प्र0 6 हिन्दी साहित्य में आपकी लोकप्रिय विधा कौन सी है? कथा, उपन्यास अथवा कविता?

उ0 मुझे विधाओं में आपसी विरोध नहीं लगता। पाठक-आलोचक या रिसीविंग समाज बेशक आपको किसी एक विधा के साथ ब्रैंड करता रहे, असली संतोष तो अभिव्यक्ति के परिमंडल में दाखिल होने का होता है। जहाँ रहते बहुत कुछ साथ-साथ किया जा सकता है . . . कविता से अपने रिश्ते के बारे में मैं बता चुकी हूँ। वह निजी, तेज, त्वरित अनुभव है। जल्दी मुक्ति देता है . . . उपन्यास जैसी निरन्तरता में उसे देखने की कोई मजबूरी नहीं है। यहाँ विभिन्नताएँ-विभिन्नताएँ भी महत्त्वपूर्ण हैं जो इतने बड़े अमाप संसार को अलग-अलग खिडकियों से देख सकने की सुविधा और प्रफुल्लता देती है। कहानी का कलेवर अपनी केन्द्रीयता, संक्षिप्तता, हृदात्मा से सीधे सरोकार के चलते मुझे खासा आकर्षित करता है। इन्हीं करणों से मेरी तृप्ति - कहानी लेखन से जुड़ी है। यों जीवनगत कारणों से भी शायद यह विधा मेरे निकट पड़ती है, जहाँ परिवार की व्यस्तताओं के चलते मुझे टूट-टूटकर टुकड़ों-टुकड़ों में समय मिल पाता है।

प्र0 7 आप की कहानियों में प्रतिपाद्य को लेकर मृत्यु बोध का यत्र-तत्र उल्लेख मिलता है। जीवन और मृत्यु के शाश्वत कटु यथार्थ के बारे में आप का क्या मंतव्य है?

उ0 यह तो मानना ही पड़ेगा कि मृत्यु का विचार, क्योंकि जन्म के साथ ही पैदा हो जाता है इसलिए इसके अस्तित्व को लेकर एक मानसिक खाँचा, हर किसी के दिमाग में, पहले से रहता है जो जीवन-अनुभव के हस्तक्षेप के चलते जुड़ता-घटता रहता है। जैविक वास्तविकता के अलावा मृत्यु का विचार एक मानसिक विचार भी है जो औरों की तरह मेरे मनाकाश में भी रहता आया है, जिसका उपयोग जीवन के ही एक आयाम की तरह हम रचनाओं में करते ही करते हैं - एक स्थिति-परिस्थिति की तरह। . . . मेरी कहानियाँ, घटनाओं को लेकर कम और घटनाओं के 'प्रभाव' की पड़ताल करने की प्रक्रिया में लिखी जाती हैं। मृत्यु के मुद्दे से लगकर और भी बहुत कुछ है जो कहा जा सकता है पर वह मेरे रचना प्रसंग से इतर होगा, इसलिए उसकी चर्चा करना जरूरी नहीं लग रहा।

203992
हि० प्र० विश्वविद्यालय पुस्तकालय
शिमला-171005